International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 10 Issue 4, July-August, 2022, Impact Factor: 7.326

वैदिक साहित्य में सूर्य का देवत्व

डॉ.रजनीश

शिवाजी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

सूर्य द्युलोक का प्रमुख देवता माना जाता है । सभी मनुष्यों को जन्म से ही सूर्य देवता के दर्शन होते हैं, अतः यह प्रत्यक्ष देवता माना जाता है । सम्पूर्ण जगत् को प्रकाश प्रदान करने के कारण ही सूर्य को संसार का चक्षु कहा गया है । इसके प्रकाश से आँखों की ज्योति बढ़ती है । सूर्योदय से पूर्व आकाश में जो लालिमा होती है, उसे उषा कहा जाता है । उषाकाल के पश्चात् सूर्योदय होता है । अतः उषा को सूर्य की प्रेयसी एवं पत्नी के रूप में भी आलंकारिक रूप में वर्णित किया गया है । प्रकाश का देवता होने के साथ–साथ सूर्य को मित्र, वरुण और अग्नि का भी नेत्र माना गया है । इसलिए वह दूरदर्शी, सर्वदर्शी व विश्वचक्षा आदि नामों से सम्बोधित हुआ है ।[1] सूर्य को संसार का गुप्तचर भी माना गया है । यह सभी प्राणियों के कृत्यों को देखता है और उदित होते ही द्युलोक, पृथिवीलोक और अन्तरिक्षलोक को प्रकाश से भर देता है तथा सब कुछ प्रकाशित कर देता है । सूर्य के अभाव में समस्त जगत् अन्धकारमय रहता है । इसके प्रकाश से अनेक रोग दूर हो जाते हैं और मनुष्य को दीर्घायु की प्राप्ति होती है । इस प्रकार इस शब्द (सूर्य) में ही इसके सभी अर्थ निहित प्रतीत होते हैं ।

"सरति अन्तरिक्षे इति सूर्यः"[2] (क)
अर्थात् अन्तरिक्ष अथवा आकाश में गति करने के कारण इस देव का नाम 'सूर्य' पड़ा है ।

वेद में ऋषिदृष्ट मन्त्रों के अनुशीलन से ऐसा प्रतीत होता है कि प्राकृतिक चेतनशक्ति के संसर्ग में रहने के कारण प्रकृति के विविध दृश्यों अथवा धर्मों के दर्शन से ऋषि को यह अनुभव हुआ कि सूर्य आदि प्राकृतिक देवताओं में एक सूक्ष्म और अदृश्य चेतनशक्ति विद्यमान है । ऋषि की यह दृढ़ धारणा है कि यही चेतनशक्ति मनुष्य के सुख और दुःख का कारण है और यही चेतनशक्ति मानव–जीवन को प्रभावित कर रही है । सूर्य आदि प्राकृतिक देवताओं में चेतनशक्ति की विद्यमानता के अनेक प्रमाण मिलते हैं, जैसे – सूर्य का दिन में दिखाया पड़ना और चन्द्रमा का रात्रि में निकलना, सूर्य का प्रातः काल में सुनहरी किरणें बिखेरना और चन्द्रमा का रात्रि में रजत किरणें बिखेरना, वर्षाकाल में आकाशमण्डल में मेघों का दौड़ना, गर्जना करना और बरसना, बादलों में बिजली का चमकना आदि । प्रकृति के उक्त विविध दृश्यों में चेतनशक्ति के दर्शन से ऋषि ने सूर्य की उसी चेतन शक्ति को देवता की संज्ञा प्रदान की है ।

सूर्य देवता में दो तत्त्व होते हैं – जड़तत्त्व और चेतनतत्त्व । यद्यपि ऋषि ने मूलतः प्राकृतिक शक्तियों में विद्यमान चेतनतत्त्व को ही देवता माना है, लेकिन जड़तत्त्व के आधार के बिना चेतनतत्त्व की सत्ता सम्भव नहीं है, इसलिए ऋषि ने जड़ (सूर्यमण्डल) एवं चेतन (भर्ग, तेज, प्रकाश) उभयरूप सूर्य को देवता माना है । इसीलिए उन्होंने वेदों के मन्त्रों में सूर्य को जड़ और चेतन संसार का आत्मा माना है ।[3] वेद के एक अन्य मन्त्र में सूर्य को उषा का अनुगमन करते हुए प्रदर्शित किया गया है ।[4] यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि सूर्य अपने जिस दृश्य रूप से उषा का अनुगमन कर रहा है, वह उसका जड़रूप है और जिस अदृश्य रूप के अधीन होकर वह अनुगमन करता हुआ प्रतीत हो रहा है, वह उसका चेतनरूप है । सूर्य देवता में प्रकाशशीलता होती है । 'देवता' शब्द की निष्पत्ति भी प्रकाशार्थक 'दिव्' धातु से मानी गई है । प्रकाशार्थक 'दिव्' धातु से युक्त 'देवता' शब्द का अर्थ है – जो प्रकाशशील हो, वह देवता है । इस दृष्टि से विचार करने पर द्युस्थानीय सूर्य देवता इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है, क्योंकि सूर्य देवता में प्रकाश का प्रत्यक्ष दर्शन होता है ।

सूर्य आदि देवशक्तियों में दानशीलता भी होती है । इसीलिए इस शब्द की निष्पत्ति दानार्थक 'दा' धातु से भी की गई है । दानार्थक 'दा' धातु से निष्पन्न 'देवता' शब्द का अर्थ है – जो दान देता है, उसे देवता कहते हैं ।

1. ऋ०, 1.50.2 : सूराय विश्वचक्षसे ।
2. निरु०, 12.9 : (क) सर्तेवा
3. ऋ०, 1.115.1 : सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ।।
4. वही, 1.115.2 : सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात् ।

ये देवशक्तियाँ प्राणियों को प्राणशक्ति, चेतनशक्ति, प्रकाश, वृष्टि और अन्नादि भोग्यपदार्थ प्रदान करती हैं । इसमें सूर्य देव प्रत्यक्ष प्रमाण है। सूर्य का वासस्थान द्युलोक है । ये प्रतिदिन प्रातःकाल उदित होकर और सांयकाल में अस्त होकर जगत् के समक्ष अपने देवत्व को प्रत्यक्ष प्रकट करते हैं तथा इस संसार का सब प्रकार से उपकार करते हैं । अतः सूर्य के प्रत्यक्ष देवत्व को आस्तिक और नास्तिक प्रायः सभी प्रकार के मनुष्य स्वीकार करते हैं। इसीलिए सूर्य सभी के लिए आराध्य है । वेदों में सूर्य को सबसे श्रेष्ठ और सबसे अधिक उपकारक बताया गया है। ये प्रतिदिन अपनी किरणों की ज्योति द्वारा संसार को प्रकाश और उष्णता आदि प्रदान करते हैं, जिससे पेड़–पौधे–वनस्पति, पशु–पक्षी और मनुष्य जीवन–शक्ति प्राप्त करते हैं ।[1] अतः सूर्य की किरणों की ज्योति प्राणिमात्र के लिए आवश्यक और उपयोगी बताई गई है । जब कार्य करने वालों का कार्य बीच में ही होता है, सूर्य इस बात की चिन्ता किए बिना कि उनका काम समाप्त हुआ या नहीं, अपनी किरणों के समूह को समेट लेते हैं अर्थात् अस्त हो जाते हैं । यही सूर्य का देवत्त्व और महत्ता है ।[2]

सूर्य देवता का वासस्थान द्युलोक है । 'निरुक्त' में देवताओं के दो प्रकार के स्थान बताए गए हैं – वासस्थान और कर्मस्थान । 'निरुक्त' में कहा गया है कि द्युलोक में दृश्यमान सूर्य देवता का वासस्थान और कर्मस्थान दोनों ही द्युलोक है, परन्तु वायु का वासस्थान द्युलोक है और कर्मस्थान अन्तरिक्षलोक है । इसी प्रकार अग्नि का वासस्थान द्युलोक है और कर्मस्थान पृथिवीलोक बताया गया है । 'निरुक्त' ने द्युलोक में वास करने वाले सभी प्राकृतिक तत्त्वों को देवता माना है ।[3]

इस प्रकार जो चेतन हो, प्रकाशशील हो, दानशील हो और जो द्युस्थानीय हो, उसे 'देवता' कहा गया है । अतः सूर्य देवता में विद्यमान चेतनशक्ति, प्रकाशशीलता, दानशीलता के कारण और द्युलोक में वास करने के कारण उनका देवत्व है ।

जब सूर्य देवता भूलोक से अपनी किरणों को समेट लेते हैं, तब रात्रि अपने अंधकार से विश्व को ढ़क लेती है । चारों ओर अंधकार ही अंधकार छा जाता है । सूर्य अपनी किरणों से सभी दिशाओं को प्रकाशित करते हैं ।[4] प्रकाशमय दिन और अंधकारमयी रात्रि ये दोनों सूर्य की महिमा से ही हैं[5] इनकी इसी महिमा के कारण इनमें देवत्त्व माना गया है ।

1. प्रश्नोप॰, 1.8 : प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः ।
2. ऋ॰, 1.115.4 : तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्या कर्तोर्विततं सं जभार ।
3. नि॰, 7.15 : देवो द्युस्थानो भवति ।
4. अथर्व॰, 13.2.2 : यो रश्मिभिर्दिश आभाति सर्वाः ।
5. वही, 13.2.32 : अहोरात्रे परि सूर्यं वसाने ।